(क) लेख, गांधीवाद या साम्यवाद ।
(ख) छ0ग0 में राइट टू रिकाल तथा सुप्रीम कोर्ट द्वारा परिवार तोड़ने में कानून की भूमिका ।
(ग) श्री विजय सिंह बलवान, जटपुरा, बुलन्दशहर, उ0प्र0 द्वारा माओवाद पर गंभीर प्रश्न और मेरा विस्तृत उत्तर ।
(घ) श्री कृष्ण कुमार जी खन्ना, मेरठ, उत्तर प्रदेश द्वारा न्यायीक भ्रष्टाचार आंदोलन की सलाह और मेरा उत्तर ।
(च) श्री धर्मपाल जी आर्य समाज, खारी बावली, दिल्ली, द्वारा तम्बाकू पर सरकार द्वारा टैक्स लगाने के संबंध में प्रश्न और मेरा विस्तृत उत्तर ।
(छ) श्री एच0एल0 कोहली चाणक्यपूरी, दिल्ली द्वारा राष्ट्रपति द्वारा सचिवों के चुनाव के संबंध में प्रश्न और मेरा उत्तर ।
(ज) राष्ट्रीय सम्मेलन की सूचना।

(क) गॉधीवाद या साम्यवाद

विश्व की वर्तमान व्यवस्थाओं में अभी लोकतंत्र और साम्यवाद के बीच सारी दुनियॉ बंटी हुई है। साम्यवाद तानाशाही का एक विकसित संशोधित स्वरूप है और लोकतंत्र लोक स्वराज्य का एक अविकसित असंशोधित स्वरूप। अर्थात पूरा विश्व दो विचारधाराओं के ही बीच चल रहा है। **1.** साम्यवाद **2.** लोक स्वराज्य। साम्यवाद का जनक मार्क्स को माना जाता है और लोकस्वराज्य का गॉधी को।साम्यवाद अपने परीक्षण में असफल होकर किसी नये संशोधित स्वरूप की प्रतीक्षा कर रहा है और गॉधीवाद अब तक कहीं भी अपने वास्तविक स्वरूप में स्थापित ही नहीं हो पाया है।

साम्यवाद राज्य सत्ता का अधिकतम केन्द्रीयकरण होता है और गॉंधीवाद राज्य सत्ता का अधिकतम अकेन्द्रीयकरण। साम्यवाद श्रमजीवियों के नाम पर बुद्धिजीवियों की तानाशाही के रूप में स्थापित होता है, किन्तु गॉधीवाद ऐसे किसी भी वर्गभेद को अस्वीकार करके सबको व्यवस्था में अवसर की समानता प्रदान करता है। साम्यवाद में शासक और शासित के रूप में दो वर्ग अनिवार्य होते हैं जबकि गॉधीवाद में शासक और शासित की अवधारणा होती ही नहीं। मेरे विचार में साम्यवाद और गॉधीवाद समाज व्यवस्था की दो बिल्कुल विपरीत अवधारणाऍ होती है जिसमें साम्यवाद में सत्ता हिंसा, दमन, प्रचार का अधिकतम उपयोग किया जाता है जबकि गॉंधीवाद में इन सबसे घृणा की जाती है। इस तरह कहा जा सकता है कि साम्यवाद जन अधिकारों की लूट का एक संगठित प्रयत्न है और गॉधीवाद इस लूट से समाज को बचाने का असंगठित प्रयास। बाकी सब संघ परिवार, कांग्रेस, समाजवादी, आदि इस लूट में सिपाही की भूमिका में हैं तो गॉधीवादी किंकर्तव्यविमूढ़ दर्शक।

गॉधीवाद का पहला प्रयोग भारत में ही सम्भावित था, क्योंकि उस समय तत्काल ही भारत लोकतांत्रिक देशों की गुलामी से मुक्त भी हुआ था और गॉधी जी ने ही इस मुक्ति संग्राम का नेतृत्व भी किया था। इसलिए स्वतंत्र भारत में गॉधीवाद के प्रयोग में कोई बाधा नहीं दिखती थी। मैंने तो यहॉ तक सुना है कि गॉधी जी फरवारी उन्नीस सौ अड़तालिस के पहले सप्ताह में ही ऐसी योजना प्रस्तुत करने पर विचार कर रहे थें । किन्तु एकाएक गॉधी जी की हत्या हो गई और गॉधी जी ऐसी योजना को भारत में प्रस्तुत नहीं कर सके। दुनिया जानती है कि पण्डित नेहरू गॉधी जी के सर्वाधिक विश्वासपात्र व्यक्ति भी रहे और गॉधीवादी के प्रबल विरोधी भी। यदि गॉधी जी जीवित रहते तो केन्द्रित राज्य तथा अर्थव्यवस्था के प्रबल पक्षधर नेहरू जी के कन्धे पर बन्दूक रखकर अपनी लोक स्वराज्य की अवधारणा को कार्यान्वित करने में सफल हो जाते, किन्तु गॉधी हत्या के बाद बन्दूक नेहरू जी के कन्धे से उतर कर उनके हाथ आ गयी और सत्तावादी नेहरू ने गॉधीवाद के ही कन्धे पर बन्दूक रखकर लोक स्वराज्य की अवधारणा को समाप्त करना शुरू किया। इस तरह भारत में गॉधीवाद प्रयोग में आने से वंचित रह गया।

सम्पूर्ण विश्व में बुद्धिजीवियों की सर्वाधिक संख्या साम्यवादियों की है और सबसे कम गॉधीवादियों की। साम्यवादी पहले विचार मंथन करते हैं तब निष्कर्ष निकालते हैं। और उसके बाद समाज को देते हैं। संघ परिवार के पास भी ऐसे बुद्धिजीवियों की संख्या बहुत है, किन्तु वहॉ भी एक तो साम्यवादियों की तुलना में संख्या कम है और दूसरी बात यह भी है कि संघ परिवार में विचार मंथन के बाद निष्कर्ष निकालने की उतनी अच्छी परम्परा नहीं जितनी साम्यवादियों के पास है। संघ परिवार के अनेक निष्कर्ष तो भारतीय संस्कृति के नाम पर पूर्व घोषित ही रहते है जिनके इर्द–गिर्द ही निष्कर्ष निकालना इन बुद्धिजीवियों की मजबूरी हो जाती है। कोई नहीं पूछता कि साम्यवादी विचारक की व्यक्तिगत जीवन पद्धति क्या है? वह सिगरेट या शराब का सेवन तो नही करता। वह क्या खाता है और कहॉ सोता है? किन्तु संघ परिवार में तो ऐसी अनेक नजरों को भी पार करना पड़ता है। गॉधीवादियों को तो बेचारों को शुरू से ही बता दिया गया है कि गॉधी विचार नहीं है, बल्कि जीवन पद्धति है। बड़े गर्व से गॉधीवादी इस बात को दूसरों के सामने दुहराते रहते हैं। ये तो किसी बुद्धिजीवी को अपने नजदीक फटकते ही उसे चर्खा, कुदाल और खादी लाद देने का पयास करते हैं। या तो वह बेचारा दूर से ही भाग जाता है। या जीवन भर विचारों के स्थान पर जीवन पद्धति को ढ़ोते रहता है।

साम्यवादी समय के अनुसार यू टर्न लेने में भी सिद्धहस्त होते हैं। इन्होंने गॉधी की सफलता के पूर्व भी गॉधी का विरोध किया और सफलता के बाद भी। इन्होंने जे0पी0 आन्दोलन में जो भूमिका अपनाई वह सर्वविदित है। आज भी हिंसा के संबंध में उनकी सोच में कोई अन्तर्विरोध नहीं, किन्तु गॉधी और जय प्रकाश की सफलता के बाद अपनी रणनीति बदलते उन्हें देर नहीं लगी। यदि आज की व्यवस्था के विरूद्ध कोई अहिंसक आन्दोलन सफल होता है तो अपनी रणनीति बदलने में वे पीछे नहीं

रहेंगे। संघ को अपनी राजनैतिक सफलता के लिए साम्यवाद से यह दुगुर्ण सीखना चाहिए कि अतिवादी हिंसक नक्सलवाद और अतिवादी अहिंसक गॉधीवाद को एक साथ जोड़कर एक म्यान में दो तलवारें कैसे सुरक्षित रखी जा सकती है। गॉधी हत्या ने साम्यवादियों को वह अच्छा अवसर दे दिया जो वे गॉधीवाद में घुसपैठ कर सकें। साम्यवादी मजबूत बुद्धिजीवी और योजनाकार तो होते ही हैं, नेहरू जी जैसा नेतृत्व और गॉधी हत्या जैसा संघ परिवार के लिए ऐतिहासिक कलंक उनके लिए और अच्छे अवसर के रूप में लगा। समाजवाद और पंचशील भारत के स्लोगन बने । सत्ता संघर्ष ही राजनीति मे कूद पड़ा। गॉधीवादियों का कर्तव्य था कि वे सत्ता की राजनीति से दूरी के महत्व को रोकने के लिए गॉधीवादी के शस्त्र का उपयोग करते किन्तु ये तो स्वयं ही राजनीति से दूरी की घोषणा करके इस संघर्ष से किनारा कर लिए। नेहरूवादियों ने और प्रच्छन्न साम्यवादियों ने गॉधीवादियों को अच्छी तरह समझा दिया कि सत्ता की राजनीति से दूरी बनाकर रखना ही है। इन लोगों ने गॉंधीवादियों को यह बात भी समझा दी कि यदि कोई साम्यवादी गॉधी विचार के साथ जुड़ता है तो वह तत्काल गॉंधीवादी चरित्र का बन जाता है और कोई अन्य जुड़ता है तो वह गॉधीवाद के लिए ही खतरनाक बन जाता है। ऐसी घृणा, ऐसा प्रचार किया जाता है, ऐसी–ऐसी बारीक छानबीन की जाती है कि बेचारा गॉधीवाद से ही तौबा कर लेता है।

गांधी हत्या के बाद ही अन्य लोगो के लिये तो गांधीवाद से जुडाव के मार्ग बन्द हो गये और साम्यवादियों के लिये खुले रहे। साम्यवादी विचारों के जिन लोगों को हिंसा से घृणा हुई या सत्ता संघर्ष से विरक्ती हुई वे सब गांधी वाद के साथ जुड़कर अहिंसा या सत्ता से दूरी के पक्ष में तो ईमानदारी से हो गये। किन्तु आर्थिक सोच तो उनकी वही रही जैसी पहले थी। कुछ साम्यवादियों ने योजना पूर्वक भी गांधीवाद को सत्ता के केन्द्रीयकरण के स्थान पर अर्थ के विकेन्द्रीकरण को तरजीही मुद्दा बनाने का गुरूमंत्र दिया और गांधीवादी धीरे –धीरे आर्थिक, मुद्दों पर अपना ध्यान कन्द्रित करने लगे। मैं अनेक वर्षो से गॉधीवादी अधिवेशनों ,सम्मेलनों या मीटिंगों में जाता रहा हूॅ। कालीकट अधिवेशन में एक मरियल प्रस्ताव को छोड़कर किसी और सम्मेलन, अधिवेशन में गॉधीवाद पर न कोई चर्चा हुई न प्रस्ताव जबकि हर अधिवेशन में आर्थिक मुद्दे बढ़–चढ़कर छाये रहे। क्योंकि गॉधीवादियों को समझा दिया गया है कि आर्थिक समस्याएॅ ही समस्याओं के केन्द्र में है। इनका समाधान ही गॉधी है न कि शासन मुक्ति या लोक स्वराज्य। अभी–अभी सम्पन्न कुरूक्षेत्र सम्मेलन में जिन तीन महत्वपूर्ण प्रस्तावों पर सहमति बनी उनमें से एक है परमाणु शक्ति मुक्त भारत बनाना और दूसरा उच्च पदाधिकारियों के वेतन अनुपात को ठीक करना और तीसरा है तिब्बत। मैं नही समझ सका कि गॉधीवादी की प्रमूख पहचान में लोक स्वराज्य प्रणाली या शासन मुक्ति के प्रयत्नों की लेशमात्र भी चर्चा न होकर परमाणु मुक्त भारत को ज्यादा प्राथमिकता क्यों दी गई।

साम्यवाद के विरूद्ध यदि कोई सबसे बडा खतरा है तो वह है गॉधीवाद। अधिकतम केन्द्रित सत्ता के विरूद्ध शासन मुक्त या न्यूनतम शासन की इतनी साफ सोच और किसी के पास नहीं। संघ परिवार की सोच और साम्यवादी सोच या

लोकतांत्रिक सोच भी इतनी स्पष्ट नहीं। ये दोनों भी कहीं सत्ता के साथ घालमेल करते ही रहते है। इन सघंर्ष में गांधीवादी के एकमात्र घोषित सिपाही ''गांधीवादी '' साम्यवादियों के मायाजाल में अन्दर तक उलझे हुए हैं। चिन्ता होती है कि कौन गॉधीवाद को इन तिकड़मों से मुक्त करायेगा? कौन साम्यवाद को राजनैतिक धरातल पर चुनौती देगा? कौन समझायेगा कि केन्द्रित शासन व्यवस्था गुलामी की निशानी है और अकेन्द्रित शासन व्यवस्था लोक स्वराज्य की। खतरा दिखता है कि कहीं भारत फिर से पूॅजीवाद की उसी दिशा में न चला जाए जिधर स्वतंत्रता के पूर्व था बुरा ही होगा। इस खतरे का एक ही समाधान है कि गॉधीवादी साम्यवादी तोता रटंत वाणी को बदलकर गॉधीवाद को लोक स्वराज्य, सहभागी लोकतंत्र या शासन मुक्ति के साथ जोड़ें गॉधीवाद को जीवन पद्धति के साथ – साथ विचार भी मानना शुरू करें और विचार मंथन की प्रणाली को भी विकसित करें। साठ वर्षो की स्वतंत्रता और गॉधी सरीखें विश्वस्तरीय महापुरूष की साख साथ में होते हुए भी गॉधीवादी आज जिस तरह मुद्दों की तलाश में भटकते रहते हैं तथा साम्यवादियों से अमेरिका विरोध, साम्प्रदायिकता, परमाणु शक्ति, आर्थिक समस्या जैसे मुद्दे उधार लेते हैं वह चिन्ता का विषय है। जो गॉधीवाद सम्पूर्ण विश्व को लोक स्वराज्य की राह दिखा सकता है उसे गॉधीवाद में अन्तर्निहित शक्ति का एहसास कराने की जरूरत है। इस एहसास को जिस केन्द्रित शासन व्यवस्था से मोर्चा लेना है उसी ने इसको घेर रखा है। सभी गॉधीवादियों को गम्भीरता से विचार करना चाहिए।

(ख) अखबारों की खबरें

छत्तीसगढ़ की तीन नगरपालिकाओं में Right to Recall प्रावधान के अन्तर्गत आम मतदाताओं द्वारा अपने–अपने नगरपालिका अध्यक्षों को बरखास्त कर दिया है। इसक चार वर्ष पूर्व मध्य प्रदेश की अनूपपुर नगरपालिका में भी ऐसा ही प्रयोग हुआ था। आश्चर्यजनक यह है कि छत्तीसगढ़ की तीन नगरपालिकाओं में यह मतदान हुआ अैर तीनों ही जगह आधे से अधिक मतदाताओं ने अपने–अपने अध्यक्षों के विरूद्ध वोट दिया।

सम्पूर्ण भारत में अविभाजित मध्यप्रदेश एकमात्र ऐसा प्रदेश रहा है जहॉ के मतदाताओं को नगरपालिका कानूनों में यह अधिकार प्राप्त है। छत्तीसगढ़ को यह अधिकार विरासन में प्राप्त हुआ है। जय प्रकाश आन्दोलन के बाद '' राइट टू रिकाल '' का आन्दोलन रामानुजगंज शहर से ही जारी रहा जो छत्तीसगढ़ का भी भाग है। देश भर के कई विद्वानों ने फोन करके मुझे इस समाचार के प्रति शुभकामनाओं सहित जानकारी दी। निश्चय ही इससे '' राइट टू रिकाल '' की मॉग को बल मिलेगा।

इस कानून को लागू कराने का सम्पूर्ण श्रेय मध्य प्रदेश के उस समय के मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह जी को दिया जाना चाहिए। मेरे विचार में दिग्विजय सिंह जी अकेले ऐसे राजनीतिज्ञ हैं जिनकी लोक स्वराज्य के प्रति पूर्ण निष्ठा हैं। मेरी तो

कल्पना ही है कि यदि दिग्विजय सिंह जी भारत के प्रधानमंत्री बन जाएं तो लोक स्वराज्य के लिए बहुत अच्छा होता। यदि राजनेताओं में गॉधी को सबसे अधिक अच्छे तरीके से किसी ने समझा है तो वह दिग्विजय सिंह ही हैं। मैं यह नहीं कह सकता कि उनकी यह समझ ब्रम्हदेव जी शर्मा द्वारा दी गई या स्वस्फूर्त है किन्तु इतना सच है कि उनमें यह समझ है जरूर। उनके बाद मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में जो सरकारें बनी उनमें पंचायती राज या "राइट टू रिकाल" के प्रति कोई निष्ठा नहीं है भले ही वे ऐसे बने हुए कानूनों को ढो रही है जरूर।

अखबारों में एक दूसरी खबर भी आई कि सुप्रीम कोर्ट ने हिन्दू विवाह कानूनों को परिवार तोड़ने में सहायक बताया है। रामानुजगंज में ही बैठकर कई वर्ष पूर्व यह नतीजा हम लोगों ने निकाल लिया था। इस संबंध में कई बार लेख भी लिखें गये और भाषण भी दिये गये। पिछले माह ही हिन्दू कोड बिल की समीक्षा करते समय फिर से मैंने यह मुद्दा उठाया था। संतोष की बात यह है कि सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी के बाद यह मुद्दा सबकी समझ में आने लगा। और दुःख की बात यह है कि इतनी मामूली सी बात समझने में सुप्रीम कोर्ट को भी इतना अधिक समय लग गया। इससे भी ज्यादा दुःख की बात यह है कि जो बात हमारे तर्क पूर्ण तरीके से समझाने के बाद भी अच्छे–अच्छे विद्वानों के गले नहीं उतरती थी वह बात सुप्रीम कोर्ट के न्यायधीशों की एक टिप्पणी से गले के नीचे तक उतरने में एक मिनट भी नहीं लगा।

स्पष्ट है कि हम लोगों ने पहाड़ी के नीचे बैठकर कुटिया में जो बावन वषों तक विचार मंथन किया है उस विचार मंथन को यदि गम्भीरता पूर्वक समझने का प्रयास किया जाए तो अनेक गल्तियॉ अपने आप बहुत कम समय में सुधर सकती है।

(ग) श्री विजय सिंह बलवान, जटपुरा, बुलन्दशहर ,उ0प्र0 –202394

प्रश्न – ज्ञानतत्व 155 अंक प्राप्त हुआ। आभार। पढ़कर मन गद्गद् हो गया। इस अंक में आपने माओवाद का यथार्थ और नक्सलवाद के उद्देश्यों का स्पष्ट चित्रण बड़े ही सटीक वह मार्मिक ढंग से किया है। पढ़कर लाभान्वित हुआ। सचमुच में ही आपका चिन्तन अत्यन्त गहन वह सूक्ष्म है जब कि देशों के बुद्धिजीवियों, राजनीतिज्ञ व पत्रकार नक्सलवाद व माओवाद को गहरे में नहीं समझा पाए है या वे वर्ग संघर्ष व स्त्री पुरूष को बांटने का काम जानबूझकर अपनी सत्ता को मजबूत करने के लिए कर रहें हैं। हमारे पड़ोस में नेपाल में माओवादी सत्ता में आने से भारत की रक्षा को खतरा उत्पन्न हो गया है। जिसमें भारत सरकार को भारत नेपाल सीमा की सुरक्षा पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। राजशाही व नक्सलवाद दोनों ही खतरनाक है तब माओवादी क्या राजशाही से ठीक रहेंगे इसका स्पष्ट उत्तर आगामी अंक में देकर कृतार्थ करें।

उत्तर – प्रो0 बी0बी0 कुमार का पता इस प्रकार है।

दुनिया में व्यवस्था दो प्रकार होते हैं। **1.** सामाजिक **2.** राजनैतिक। सामाजिक व्यवस्था में मनुष्य को व्यक्ति कहते हैं और राजनैतिक व्यवस्था में नागरिक। दोनों की व्यवस्था भी भिन्न होती है तथा अधिकार भी।

व्यक्ति के चार अधिकार होते हैं **1.** जीने का **2.** सम्पत्ति का **3.** स्वतंत्र अभिव्यक्ति **4.** स्वनिर्णय। व्यक्ति के इन चार प्रकार के अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी देने वाली इकाई को राज्य कहते हैं। राज्य द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को दी जाने वाली इस सुरक्षा को ही मौलिक अधिकार कहते हैं या दूसरे शब्दों में इन्हें प्राकृतिक अधिकार भी कहते हैं। संविधान किसी व्यक्ति के ये अधिकार न उसे दे सकता है न ही ले सकता है। राज्य तो ऐसे अधिकारों को संविधान में शामिल करके उसकी सुरक्षा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता मात्र घोषित कर सकता है। यदि राज्य किसी भी रूप में इन अधिकारों में कोई कटौती करे तो यह उसका अपराध माना जाएगा। भारत में वर्तमान संविधान जीने का अधिकार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार तो देता है, किन्तु सम्पत्ति और स्वनिर्णय के अधिकार में लगातार बाधाएँ खड़ी करता है जो पूरी तरह गलत है।

समाज व्यवस्था की पहली ईकाई परिवार, दूसरी क्षेत्र या गॉव, तीसरी जिला, चौथी प्रदेश, पॉचवी राष्ट्र, छठवीं विश्व मानी जा सकती है। संवैधानिक व्यवस्था की ईकाइयॉ इसके ठीक विपरीत होती हैं। अर्थात् राष्ट्र, प्रदेश, जिला गॉव और परिवार। सामाजिक ईकाइयॉ अपनी स्वेच्छा से अपने अधिकार ऊपर देती हैं या दे सकती हैं जबकि संवैधानिक ईकाइयॉ ऊपर से नीचे की ओर अपने अधिकार स्वेच्छा से दे सकती है। आदर्श व्यवस्था में इन दोनों में कभी कोई टकराव नहीं होता, किन्तु राज्य के पास शक्ति होती है इसलिए वह कभी बलपूर्वक कभी छल पूर्वक समाज के अधिकारों में छीना–झपटी करता रहता है। अमेरिका, ब्रिटेन आदि देशों में यह छीना–झपटी यदा–कदा और चालाकी से ही होती है जबकि भारत पाकिस्तान जैसे देशों में सुनियोजित छल पूर्वक और साम्यवादी देशों में पूरी तरह बल पूर्वक।

समाज में व्यवस्था बनाए रखने के दो ही मार्ग हैं **1** तानाशाही **2** लोक स्वराज्य। लोकतांत्रिक शासन में स्वतंत्रता तो होती हैं, किन्तु व्यवस्था नहीं होती। आज तक लोकतांत्रिक शासन पद्धति में दुनिया के किसी देश किसी देश में व्यवस्था न तो स्थापित हो पाई है न होना संभव है।

शासन पद्धति तीन प्रकार की होती है **1.** तानाशाही **2.** लोकतंत्र **3.** लोक स्वराज्य। लोकतंत्र यदि केन्द्रीयकरण की ओर बढ़े तो तानाशाही की ओर बढ़ा हुआ माना जाता है और लोक स्वराज्य की ओर बढ़े तो आदर्श स्थिति मानी जाती है, किन्तु यदि लोकतंत्र किसी तरफ न बढ़े तो अव्यवस्था निश्चित है। लोकतंत्र की तुलना हम व्याकरण के उस लिंग से कर सकते हैं जो पुलिंग और स्त्रीलिंग के बीच तीसरा लिंग माना जाता है।

लोक स्वराज्य पूर्ण रूप से तो दुनिया के किसी देश में आया नहीं किन्तु पश्चिम के देशों में लोकतंत्र लोक स्वराज्य की दिशा में झुका हुआ माना जाता है। भारत का लोकतंत्र किसी दिशा में झुका हुआ नहीं है। एशिया के अन्य अनेक देशों का लोकतंत्र भी लगभग भारत के ही समान है जहॉ तानाशाही और लोकतंत्र का खेल चलता रहता है। भारत भी जिस गति से अव्यवस्था की ओर बढ़ रहा है उसमें तानाशाही की सम्भावना स्पष्ट दिखती है कहा नहीं जा सकता कि वह तानाशाही व्यक्तिगत होगी या सैनिक या नक्सलवादी किन्तु लोकतंत्र का भविष्य तो उधर ही जाता दिख रहा है।

तानाशाही भी कई प्रकार की होती है। व्यक्ति की तानाशाही परम्परागत राजतंत्र या साम्यवाद। नक्सलवाद या माओवाद भी साम्यवाद का ही अतिवादी रूप माना जाता है। इस तरह इन तीनों प्रकार की तानाशाहियों में सिर्फ गुलामी ही गुलामी होती है। इसमें स्वराज्य तो होता ही नहीं। राजतंत्र में आंशिक लोक स्वराज्य होता भी है, क्योंकि राजा तानाशाह होते हुए भी समाज के सामाजिक मामलों में कम हस्तक्षेप करता है, अन्यथा व्यक्तिगत तानाशाही या साम्यवादी तानाशाही में तो न कहीं लोकतंत्र होता है न लोक स्वराज्य। जनहित के नाम पर किसी भी सीमा तक अत्याचार के सारे उदाहरण देखे जा सकते हैं। फिर भी राजशाही और साम्यवाद के बीच तुलना करें तो राजशाही की अपेक्षा साम्यवाद कम खतरनाक होता है, क्योंकि राजशाही एक व्यक्ति की तानाशाही होती है और साम्यवाद एक ग्रुप की और व्यक्ति की अपेक्षा ग्रुप कम खतरनाम होता है। यदि हम क्यूबा की व्यक्तिगत तानाशाही को अलग करके अन्य देशों की साम्यवादी व्यवस्था को समझें तो पाएंगे कि सभी साम्यवादी देशों में परिवर्तन की आंशिक सम्भावनाऍ मौजूद हैं जो राजतंत्र में तो दूर–दूर तक नहीं दिखती। प्रश्न राजशाही या नक्सलवाद के बीच तुलना का नहीं है। विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या राजशाही को आदर्श मान लें। यदि नहीं तो क्या करें? क्या हाथ जोड़कर निवेदन करने से राजशाही की जगह लोक स्वराज्य आ सकता है? या क्या संभव है कि कोई राजा भविष्य में स्वेच्छा से राजतंत्र को खत्म कर देगा। प्रश्न यह है कि नेपाल की जनता के पास विकल्प क्या थे। उसने राजतंत्र से मुक्ति के लिए एक जुआ खेला है। या तो कोई नया मार्ग निकलेगा या नेपाल की जनता का और क्या बिगड़ेगा। राजा की तानाशाही की जगह प्रचण्ड की तानाशाही झेलनी पड़ेगी। इससे ज्यादा तो बुरा कुछ नहीं होगा। जो लोग आज नक्सलवाद को बुरा –भला कह रहे हैं उन्होंने नेपाल की जनता के समक्ष और क्या विकल्प रखे थे। राजतंत्र का एक राजा जिस पर वहॉ की जनता को पूर्व राजा की हत्या का संदेह हो उस राजा या उसके राजतंत्र से मुक्ति के लिए यदि वहॉ की जनता ने गलत भी निर्णय किया तो उसे नेपाल की जनता की मजबूरी महसूस करने की जरूरत है, न कि गलती निकालने की। नेपाल में राजतंत्र के यथा स्थितिवाद की जड़ता को तो टूटना आवश्यक था। हम भारत के लोग समय पर छद्म हिन्दुत्व के नाम पर राजशाही से मुक्ति में वहॉ की जनता का मार्गदर्शन नहीं कर सके यह हमारी भूल है और इसका खामियाजा तो हमें भुगतान पड़ेगा ही। भारत सरकार भले ही मजबूरीवश राजा का समर्थन करती, किन्तु भारत की जनता को तो

वहॉ लोकतंत्र के समर्थन में आवाज उठानी ही चाहिए थी। यदि ऐसा होता तो शायद वहॉ की स्थिति आज से कुछ भिन्न होती।

मेरी तो स्पष्ट धारणा है कि जब तक लोक स्वराज्य न आ जावे तब तक यथास्थिति को लोक स्वराज्य की दिशा में ले जाने को संघर्ष जारी रहना चाहिए अर्थात् राजतंत्र के विरूद्ध नक्सलवाद, नक्सलवाद के विरूद्ध लोकतंत्र और लोकतंत्र के विरूद्ध लोक स्वराज्य का संघर्ष चलता रहे। जो लोग राजतंत्र के मरे हुए सांप को जीवित करने में लगे हैं वे व्यर्थ की कसरत बन्द करके लोकतंत्र के समर्थन में नक्सलवाद का विरोध शुरू करें तो अच्छा होगा। आपने भारत के समक्ष जो संकट की सम्भावना बताई है वह तो स्पष्ट दिख ही रही है। उसका कोई राजनैतिक समाधान भारत की राजनैतिक व्यवस्था खोजेगी। हम तो सामाजिक समाधान ही कर सकते हैं और वह है वहॉ की जनता की अब तक सूझ–बूझ की प्रशंसा और आगे के संघर्ष का मार्गदर्शन।

अन्त में मेरी तो यही सलाह है कि हम सम्पूर्ण विश्व की जिस व्यवस्था में भी रह रहे हो उस व्यवस्था को लोक स्वराज्य की दिशा में ले जाने के लिए उसका विरोध करें और तानाशाही से विरोध के लिए उसका समर्थन करें। नेपाल में भी जब तक लोक स्वराज्य न हो तब यथास्थिति को तोड़ने का प्रयत्न जारी रहना चाहिए चाहे वह राजशाही हो, नक्सलवाद हो, लोकतंत्र हो या कोई और हो।

(घ) श्री कृष्ण कुमार जी खन्ना, मेरठ, उत्तर प्रदेश ।

प्रश्न —   आप पूरी सक्रियता से आन्दोलन के लिए ईमानदार प्रयत्न कर रहे हैं। बीस इक्कीस, सितम्बर के सम्मेलन में आन्दोलन के मुद्दे भी तय होने हैं। यदि न्यायालयों के भ्रष्टाचार की रोकथाम पर आन्दोलन हो तो अच्छा रहेगा। गॉधी जी भी भ्रष्टाचार का एक रोग मानते थे। न्यायपालिका का भ्रष्टाचार तो और भी अधिक व्यापक बीमारी है। विचार मंथन तो बहुत हो चुका। अब तो तत्काल सत्याग्रह शुरू कर दें।

भरत गॉधी भी ठीक दिशा में सक्रिय हैं। यदि आप और भरत गॉधी मिलकर कुछ करें तो सफलता जल्दी मिल सकती है। धन सम्पत्ति की कोई न कोई सीमा तो बननी ही चाहिए। वेतन का भी इतना फर्क ठीक नहीं। लोहिया जी ने एक ओर दस की सीमा बताई थी उस पर अमल नहीं हुआ। क्यों न इसे आधार बनाकर आन्दोलन करें।

उत्तर — मेरी पत्नी प्रतिदिन प्रातः उठकर गीता पढ़ती है, किन्तु वह गीता को बिल्कुल नहीं समझती। वह गीता को बहुत मानती है, किन्तु जानती नहीं। मैं गीता को जानता हूॅ पर मानता नहीं। गीता पर बोल भी लेता हूॅ और लिख भी लेता हूॅ, किन्तु

पढ़ता नहीं। अच्छा होता यदि मेरी पत्नी गीता को मानने के साथ–साथ जानने भी लगती और मैं जानने के साथ–साथ मानने भी लगता।

आप गॉधी को पूरी तरह मानते हैं। आपने गॉधी को जीवन में उतारा है। आप इतना बड़ा व्यवसाय करते हुए पूरी तरह ईमानदार हैं यह कोई साधारण बात नहीं। व्यवसाय के साथ–साथ सत्याग्रह भी करना तो और भी कठिन कार्य है। मैं तो महसूस करता हूॅ कि स्वजीवी होते हुए आप जिस तरह गॉधी को जी रहे हैं वैसा व्यक्ति मुझे अब तक देखने को नहीं मिला परजीवियों में तो ऐसे कई लोग मिल सकते हैं। आपने सात आठ जुन को सेवाग्राम प्रवास के समय जिस तरीके से मेरी भूल बताई उस तरीके के कारण मेरे मन में आपके प्रति श्रद्धा भाव पैदा हुआ।

किन्तु गॉधी को मानना एक अलग बात है और जानना बिल्कुल अलग बात। गॉधी जिस एक बात के लिए सम्पूर्ण विश्व में जाने जाते हैं वह है उनका लोक स्वराज्य का विचार। सुराज्य गॉधी का कभी विचार नहीं रहा। गॉधी का विचार यह था कि किसी अच्छी से अच्छी दूसरों की व्यवस्था से भी अपनी व्यवस्था अच्छी होती है। यदि कभी व्यवस्था करने वाले की नीयत भी खराब हो तो ऐसी व्यवस्था को एक क्षण भी चलते रहना हमारी कायरता का प्रतीक हैं। गॉधी के इस मर्म को समझने की आवश्यकता है। यदि सब कुछ हुआ और राज्य का हस्तक्षेप समाज में कम नहीं हुआ तो मेरे समझ में गॉधी को समझने में कहीं न कहीं भूल हुई है।

भ्रष्टाचार एक गम्भीर रोग है। भ्रष्टाचार को समाप्त होना ही चाहिए। यह लगातार बढ़ रहा है। न्यायपालिक भी इससे अछुती नहीं है। दिल्ली में होने वाले सीलिंग प्रकरण में न्यायपालिका के सर्वोच्च स्तरीय भ्रष्टाचार की चर्चा ने तो हमारा सारा विश्वास ही डिगा कर रख दिया है। इस बात पर मेरी पूर्ण सहमति है कि भ्रष्टाचार दूर करना हमारे आन्दोलन का विषय हो। यदि राज्य नये –नये कानून बना–बना कर कर्मचारियों या न्यायाधीशों के अधिकर दायित्व और हस्तक्षेप के अवसर बढ़ाता जावे तो क्या हमारें भ्रष्टाचार विरोध का कोई औचित्य रह जाता है। ऊपर की व्यवस्था में तो करोड़ों का भ्रष्टाचार होता रहें और छोटे–मोटे बाबू या जज के विरूद्ध हम सत्याग्रह करें यह हमारा आन्दोलन का विषय नहीं हो सकता। हमें सुराज्य और स्वराज्य के बीच के फर्क को समझते हुए स्वराज्य के पक्ष में आवाज उठानी होगी।

भरत गॉधी ने एकमुश्त धन वितरण का जो मुद्दा उठाया है उस मॉग से मैं सहमत हूॅ। यदि आवश्यकता हुई तो इस मॉग के समर्थन में मैं सहयोग करूॅगा, किन्तु मैं भरत जी के साथ मिलकर काम करने का मन नहीं बना पा रहा हूॅ। सिर्फ गॉधी नाम रख लेना या गॉधी का जीवन जी लेना ही पर्याप्त नहीं है। सिर्फ गॉधी जीवन भर राजनैतिक अधिकारों की असमानता को सर्वाधिक खतरनाक मानते थे। भरत जी के आन्दोलन में आर्थिक असमानता को तो मुद्दे पर तो बिल्कुल ही चुप्पी है। आपने भी वेतन की असमानता को एक दस के बीच सीमित करने की लोहिया जी की मॉग का

जिक्र किया है, किन्तु न आपने ने भरत जी ने राजनीतिक असमानता की कोई सीमा बनाने का सुझाव रखा। जब तक संसद और समाज के बीच राजनैतिक अधिकारों की जुड़ने की स्थिति में नहीं हैं। इससे अच्छा काम तो रणवीर शर्मा जी का है जो पूरी तरह राजनैतिक अधिकारों के विकेन्द्रीयकरण को मुख्य आधार बनाकर चल रहे हैं। गॉधी जी जिस तरह राजनेताओं से ठगे गये या जय प्रकाश जी की जो हालत राजनीतिज्ञों ने की है उससे सबक लेने की आवश्यकता है। देश के प्रत्येक मतदाता को एक–एक लाख रू0 महीना देने का वचन भी दे दिया जावे और चुनाव के बाद दे भी दिया जावे तो लोक स्वराज्य की तुलना में यह महत्वहीन है। ऐसा अब तक मैंने समझा है और मेरी समझ में गॉधी की सोच भी यही थी।

संसद और विधान सभाऍ परिवार, गॉव या अन्य ईकाइयों के आन्तरिक मामलों में किस सीमा तक हस्तक्षेप कर सकती है ऐसी सीमा रेखा बनाने की चर्चा भी करने से सब लोग कतराने लगते हैं। ऐसे लोग क्यों नहीं कहते कि इसकी कोई सीमा रेखा होनी चाहिए। सब वेतन भत्ता, धन सम्पत्ति तक की सीमा रेखा तक ही सीमित क्यों रहते हैं? स्पष्ट है कि अधिकांश तो कुण्ठित मानसिकता के इतने अभ्यस्त हैं कि वे सोच ही नहीं पाते और कुछ ऐसी भी हैं जिनकी राजनैतिक भूख ऐसी शक्ति अपने पास इकट्ठी करना चाहती है इसलिए वे सिर्फ आर्थिक असमानता को ही मुद्दा बनाए रखना चाहते हैं।

मेरा आपसे निवेदन है कि आप या भरत जी जो मुद्दा उठा रहे हैं उससे मेरी पूरी सहमति है। मेरी तो सिर्फ इतनी ही इच्छा है कि आर्थिक आजादी के साथ गॉधी के लोक स्वराज्य को भी जोड़कर देखने का प्रयत्न करें।

(च) श्री धर्मपाल जी आर्य समाज, खारी बावली, दिल्ली ।

प्रश्न – आप तम्बाकू पर सरकार द्वारा टैक्स लगाने का ठीक मानते है या गलत?

उत्तर –इस एक लाईन के प्रश्न पर बहुत गम्भीरता से विचार करना होगा।

1.किसी व्यक्ति या उसके व्यक्तिगत खान–पान के संबंध में निर्णय का अधिकार किसे।
2.शासन द्वारा टैक्स लगाने की अन्तिम सीमा क्या? टैक्स समीक्षा का अधिकार किसे।

इस संबंध में मेरी आपकी सोच में कुछ फर्क है। आप तम्बाकू के उपयोग को गलत मानते हैं और मैं भी वैसा ही मानता हूॅ। आप तम्बाकू के उपयोग को निरूत्साहित करना अपना कर्तव्य समझते है और मैं भी वैसा ही समझता हूॅ, किन्तु आप तम्बाकू के उपयोग को रोकना अपना अधिकार मानते हैं और इसे अपराध मानता हूॅ ।अ शराब पीकर धर बर्बाद कर रहा है।आप इसे कानून से या बलपूर्वक रोकते हैं ,

क्योंकि वह उसका गलत कार्य है। आप यज्ञ करते हैं और अ आकर इस आधार पर आग बुझाता है कि भूखें पेट अ की चिन्ता छोड़ कर आप घी या अन्न जला रहे हैं। आपका तर्क है कि यज्ञ अच्छा काम है। इस शराब और यज्ञ की अच्छे–बुरे की सीमा रेखा सिर्फ आपने बनाई है, अ ने नहीं। आपने अपनी सीमारेखा भी बना ली और अ की भी आपने ही बना ली। क्या यह श्रेष्ठता का सिद्धान्त न्यायोचित है। या तो कोई किसी दूसरे की सीमा रेखा न बनाये या ऐसी सीमा रेखा दोनों मिलकर बनावे। यदि अ को यह विश्वास हो जाए कि ऐसी सीमारेखा बनाने के पीछे मेरी नीयत भी खराब है तब अ के समक्ष बन्दूक उठाने के अतिरिक्त क्या मार्ग बचता है? क्या आज ऐसा ही नही हो रहा है? क्या आज कानून बनाने या बनवाने वालों की नीयत ठीक –ठीक है? क्या तम्बाकू के उपयोग की चिन्ता करने वाले अन्य मामलों में उनका आर्थिक शोषण न हो इसके प्रति भी चिन्तित है? जिस राजनैतिक व्यवस्था द्वारा बनाये गये कानून ग्रामीण अर्थव्यवस्था को कमजोर करने में सहायक हों, जो श्रम की अपेक्षा बुद्धि के महत्व बढ़ाने में सहायक हों, जो समाज के सारे अधिकार राज्य या संसद के पास इकट्ठा करने के लिए उतावले हों, ऐसे शुभचिन्तकों की तम्बाकू बन्द करने की शुभ चिन्ता का कैसे समर्थन किया जाए। अब तक बेचारे गरीब इसलिए ठगे जा रहे है कि आप जैसे विश्वसनीय लोग राज्य का समर्थन करने के लिए बीच में ढाल के रूप में आ जाते हैं। मेरा तो स्पष्ट मत है कि तम्बाकू रोकने के लिए राज्य का हस्तक्षेप भी अपराध है और ऐसे हस्तक्षेप का समर्थन भी अनुचित है। तम्बाकू को निरूत्साहित करना समाज का काम है। निचली ईकाईयॉ आपसी सहमति के आधार पर इन्हें रोकने का कानून बना सकती हैं, किन्तु राज्य को ऐसी अनुमति देना ठीक नहीं।

अब तक हमारा स्वयं का आचरण विश्वसनीय होने से अ पर हमारे कहे का प्रभाव पड़ता था। अब हमारे अपने आचरण का प्रभाव तो रहा नहीं, किन्तु हम स्वयं को प्रभावशाली सिद्ध करने में जी जान से जुटे हुए है। इसलिए हम राज्य से तम्बाकू बन्द करने का कानून बनवाने की इच्छा रखते हैं। आपने भूल से भी राज्य के लिए अपने बन्द दरवाजे खोल दिये तो राज्य तम्बाकू नियंत्रण तक ही सीमित न रहकर भूखे शेर की तरह आपकी सम्पूर्ण पारिवारिक सामाजिक व्यवस्था पर आक्रमण कर देगा। तब राज्य को रोकना आपके वश में नही रहेगा। एक राजा राम मोहन राय की ऐसी ही गलती का खामियाजा हम आज तक भुगत रहे हैं। अब हम वैसी भूल सुधारने की पहल करें।

आपने तम्बाकू पर टैक्स लगाने की बात की है। टैक्स का एक ही आदर्श सिद्धान्त होता है कि आम उपयोग की वस्तुओं को प्राथमिकता के क्रम में लिख लें और अपनी आवश्यकता के आधार पर नीचे से टैक्स तब तक लगाते जावें जब तक आपकी सरकारी आवश्यकता पूरी न हो जावे। इसके अतिरिक्त पूरी दुनियॉ में टैक्स की कोई आदर्श व्यवस्था हो ही नहीं सकती। स्वाभाविक है कि रोटी, कपड़ा, मकान दवा इस क्रम में ऊपर से लिखे जा सकते हैं। आवागमन का नम्बर उसके बाद आता है। इस सूची के क्रम को तो हम बदलते नहीं और टैक्स लगाते समय रोटी, कपड़ा, मकान,

दवा से शुरू करते हैं। आप क्यों नहीं आवागमन या टेलीफोन से शुरू करते हैं। टेलीफोन सस्ता हो, किराया न बढ़े, भले ही अनाज और दवा पर टैक्स क्यों न लगाना पड़े यह कौन सी अर्थनीति है। तम्बाकू या बीड़ी का उपयोग करने वाले अधिकांश लोग श्रम जीवी हैं। आप यदि इतने ही शुभ चिन्तक है तो बीड़ी और तम्बाकू पर टैक्स लगाकर आप वह धन रोटी, कपड़ा,मकान, दवा को टैक्स फ्री करने में करते। किन्तु आप बीड़ी या तम्बाकू से प्राप्त धन श्रमजीवियों पर खर्च न करके शिक्षा पर लगाना चाहते हैं या बिजली, डीजल, पेट्रोल की मूल्य वृद्धि को रोकन में खर्च करना चाहते हैं । बीड़ी पर इस बहाने कर लगाना कि उससे सेहत खराब होती है किन्तु सरसों तेल पर टैक्स क्यों .... ? यदि कोई उत्तर हो तो देने की कृपा करें। जो राजनैतिक व्यवस्था साइकिल पर कर लगाकर रसोई गैस पर सब्सिडी दे रही हो उस व्यवस्था को हमारी भलाई के नाम बीड़ी पर टैक्स लगाने की छुट नहीं दी जा सकती। यह अलग बात है कि वह व्यवस्था अपनी राक्षसी अर्थ भूख मिटाने के लिए बीड़ी पर टैक्स लगाकर आप जैसे समाज सेवकों का समर्थन जुटानें और साइकिल, सरसों तेल या दाल जैसी वस्तुओं पर लगने वाले कर का आपको पता ही न चलने दे ।

यदि मैं भारत का प्रधानमंत्री होता तो रोटी, कपड़ा, मकान, दवा जैसी सभी आवश्यक उपयोग की वस्तुओं को कर मुक्त कर देता तथा प्रत्येक व्यक्ति को जन्म से ही इतना मासिक धन देता जिससे उसकी प्रारम्भिक आवश्यकताएॅ पूरी हो सकें । इस कार्य को पूरा करने के लिए यदि आवश्यक होता तो मैं आवागमन टेलीफोन आदि को महंगा करना तथा शिक्षा पर किये जाने वाले खर्च को भी पूरी तरह रोक देता। इसके बाद मैं विचार करता कि बीड़ी या तम्बाकू जैसी अहितकर वस्तुओं पर कर लगाकर उसका सारा सीधा अतिरिक्त लाभ उसी वर्ग को कैसे दिया जा सकता है। मैं आपको स्पष्ट कर दूॅं कि शिक्षा या रसोई गैस की सब्सिडी पर खर्च करने के लिए श्रमजीवियों की बीड़ी या तम्बाकू पर टैक्स लगाने का पाप मैं तो कभी नहीं करता क्यों कि मैं स्वामी दयानन्द को मानने वाला होने के कारण गरीबों और शरीफों की आह को महसूस करता हूॅं।

(छ) श्री एच0एल0 कोहली चाणक्यपूरी, दिल्ली ।

प्रश्न — एक अप्रैल दो हजार सात को आर्यसमाज मन्दिर हनुमान रोड़ में आपका भाषण सुनकर प्रभावित हुआ। आपने राजनीति पर नियंत्रण हेतु ‘‘राइट टू रिकाल’’ तथा समानुपातिक प्रतिनिधित्व का सुझाव दिया। मेरे विचार में यदि राष्ट्रपतीय प्रणाली लागू कर दी जावे तो देश की अधिकांश समस्याएॅ सुलझ सकती हैं। इसके अनुसार कोई भी सांसद मंत्री नहीं बन सकता। इस व्यवस्था में मंत्रियों या सचिवों का चयन राष्ट्रपति द्वारा विशेषज्ञों में से स्वतंत्रतापूर्वक किया जाता है। इस प्रणाली से भ्रष्टाचार भी खत्म हो सकता है। आप लोग इस प्रणाली पर विचार करें।

उत्तर – आपका पत्र बहुत पहले ही मिला था। हमारी टीम में इस विषय पर लम्बा विचार मंथन चला। स्व0 मदन मोहन जी व्यास रतलाम वाले इस विचार को लगातार उठाते रहे कि भारत में कार्यपालिका और विधायिका को बिल्कुल अलग–अलग कर देना चाहिए। हमारी राय में राष्ट्रपतीय प्रणाली का स्वरूप भी ऐसा ही होगा। मैं भी सहमत हूँ कि विधायिका और कार्यपालिका को अलग–अलग कर देने से कई समस्याएँ कम हो सकती हैं।

यदि राष्ट्रपतीय प्रणाली के लिए जन आन्दोलन शुरू करें तो व्यापक जन समर्थन की सम्भावना उतनी नहीं दिखती जितनी संसद और विधान सभाओं के अधिकार परिवार गॉव जिले को बांटने से। आदर्श स्थिति तो यह होती कि संसद के अधिकार और हस्तक्षेप भी कम हो जाए तथा कार्यपालिका और विधायिका का पृथक्करण भी हो जाए। यदि ऐसा होना सम्भव न हो तो राज्य के अधिकार दायित्व और हस्तक्षेप ही कम से कम दिया जाए। यदि वैसा भी न हो तो विधायिका को कार्यपालिका से पृथक कर दिया जावे। कुछ न कुछ इस दिशा में होना चाहिए। हम लोग राइट टू रिकाल तथा अधिकारों के विकेन्द्रीयकरण का आन्दोलन चला रहे हैं। आप या अन्य लोग राष्ट्रपतीय प्रणाली पर कोई आन्दोलन शुरू करें तो हम आपके समर्थन में रहेंगे। मेरी इच्छा है कि हम आप एक दूसरे के प्रयत्नों के पूरक के रूप में सहयोग करें।

डा0 रामतीर्थ अग्रवाल (फिजीयोलिजिस्ट)151ए सनलाईट कॉलोनी 2 हरी नगर आश्रम डीडीए फ्लैट्स मथुरा रोड नई दिल्ली– 110014

ज्ञान तत्व (16 जुन से 30 जून) की प्रति मिली है। ''संघ'' की पहली बार इतनी सशक्त विवेचना पढ़ने को मिली है। (पृष्ठ–6 पंक्ति 13,14,15)सर्वोदय जिस भ्रम में जीती है वह भी सराहनीय है तथा मेरी राय में किसी सीमा तक वही ''सर्वोदय'' की विफलता है। दूसरे की गोदी में खेलने वाला कभी भी वह काम नहीं कर पाता है जिसकी वो घोषणा का यत्न करता है।

औसत हिन्दुस्तानी पढ़ने की आदत से बहुत दूर हो चला है मैं भी उनमें से एक हूँ। आपका निरन्तर ''तत्वदर्शन'' कर प्रकाशन करना, निश्चय ही आपका स्तुति योग्य संकल्प और ''कर्म–यज्ञ'' है। मेरे योग्य कोई भी कार्य हो तो लिखिएगा। मेरठ से खन्ना जी का पत्र आदि आता होगा। उनके लिए मेरा नमस्कार और नमन। हमारे शिक्षाकाल में वे हमारे करीब ही विक्टोरिया पार्क में रहते थे।

(ज) राष्ट्रीय सम्मेलन की सूचना

प्रिय बन्धु,

उन्तीस, तीस दिसम्बर दो हजार सात को सेवाग्राम में बैठकर हम सबने आन्दोलन की रूपरेखा पर विचार किया था। चार मई को गॉधी शान्ति प्रतिष्ठान में बैठकर आगे की चर्चा हुई। सात, आठ जुन को सेवाग्राम में बैठकर आगे की योजना पर विचार हुआ। सर्वसम्मति थी कि अब आन्दोलन की शुरूआत कर दी जाए। बार–बार सम्मेलन और मीटिंग करना और अगली बैठक की तारीख तय करना कोई अच्छी आदत नहीं है। इससे सक्रिय कार्यकर्ताओं में निराशा का भाव पैदा होता है। इसलिए तय हुआ कि बीस इक्कीस सितम्बर को सेवाग्राम में एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया जाए। सम्मेलन दो दिन का हो। सम्मेलन की मोटी–मोटी रूपरेखा पर इस तरह चर्चा हुई है।

1.सम्पूर्ण आन्दोलन के एकमात्र सूत्रधार ठाकुरदास जी बंग हों। उनका निर्णय अन्तिम हो और सबको स्वीकार्य हो।

2.हमारे आन्दोलन का लक्ष्य लोक स्वराज्य हो। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हम दो सूत्रीय मॉग रखे **1.** प्रतिनिधि वापसी का अधिकार और **2.** परिवार गॉव जिले के अधिकारों की सूची संविधान में डालना। सम्मेलन चाहे तो कोई तीसरी मॉग भी जोड़ सकता है।

3.आन्दोलन की मॉगों पर जनमत खड़ा करने के लिए कुछ समसामयिक मुद्दों पर सविनय अवज्ञा या सत्याग्रह शुरू करें। यह सविनय अवज्ञा ही संघर्ष का रूप ले।

4.हमारा कोई भी मुद्दा ऐसा ही हो जो शासन के अधिकार कम करके निचली ईकाइयों को मजबूत करे।

5.हमारा सम्पूर्ण आन्दोलन, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा या संघर्ष पूरी तरह अहिंसक हो। हम किसी भी रूप में बल प्रयोग न करें।

6.आन्दोलन में किसी को संगठन के प्रतिनिधि के रूप में शामिल न करें। आन्दोलन में शामिल प्रत्येक व्यक्ति व्यक्तिगत आधार पर शामिल हो।

7.सेवाग्राम सम्मलेन के संयोजक बंग जी तथा सह संयोजक संतोष द्विवेदी, अविनाश काकड़े तथा गड़करी जी रहें।

8.सम्मेलन में सब प्रकार के लोगों को बुलाने और आने की छूट होगी। धर्म, जाति, लिंग या विचारधारा का कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा। फिर भी आमंत्रण सूची का अन्तिम अधिकार संयोजक तथा सह संयोजकों का ही होगा कोई विशेष बात हो तो हम आप उन्हें सुझाव दे सकते हैं।

9.सम्मेलन बीस तारीख को प्रातः नौ बजे या उसके आस–पास शुरू होगा।

10.सम्मेलन में आन्दोलन के मुद्दों को अन्तिम रूप दिया जा सकता है। आन्दोलन का नाम भी तय होगा। वैसे लोक स्वराज्य आन्दोलन नाम रखने का प्रस्ताव है।

11.सम्मेलन में एक केन्द्रीय सलाहकार समिति का भी गठन हो सकता है।

12.सम्मेलन में ऐसे सत्याग्रहियों की सूची भी बन सकती है जो जेल जाने तक के लिए तैयार हों।

13.सम्मेलन में आन्दोलन का झण्डा और नारा भी तय हो सकता है।

और भी कई मुद्दों पर विचार संभव है। सम्मेलन में बहुत गम्भीर और महत्वपूर्ण व्यक्तियों को ही सूचना दी जा रही है। यदि आपको पत्र न मिले या नाम छूट गया हो तो आप मुझे फोन पर सूचना दें। मैं आपको विशेष रूप में सम्मिलित कराने का प्रयास करूँगा।

आने–जाने का मार्ग व्यय स्वयं व्यवस्था करनी है या क्षेत्रीय स्तर पर व्यवस्था करनी है। निवास भोजन की व्यवस्था आयोजन समिति करेगी।

हम बहुत समय से किसी आन्दोलन की तैयारी पर चर्चा कर रहे हैं। अब उसका निर्णायक अवसर उपस्थित है। आप सब ज्ञान यज्ञ परिवार से जुड़े हैं। आपको इस सम्मेलन में अवश्य आना चाहिए। समाज को आज बलिदान चाहिए और बलिदान के पूर्व एक योजना। बीस–इक्कीस सितम्बर 2008 ऐसी योजना का निर्णायक अवसर बने इस उम्मीद के साथ ही मैं आपको अपनी ओर से यह सूचना भेज रहा हूँ। आप मेरे फोन नम्बर – 09968374100 पर भी सम्पर्क कर सकते हैं।